Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2
ISSN No: 3049-4176

डॉ. मिथिलेश शर्मा का संस्कृत साहित्य में सामाजिक अवदान : एक विवेचन

Dr. Narender Kumar
Assistant Professor, Department of Sanskrit, NIILM University, Kaithal, Haryana
Renu Yadav
Ph.D. Research Scholar, Department of Sanskrit, NIILM University, Kaithal, Haryana

भूमिका -

भारतीय संस्कृति की आत्मा संस्कृत साहित्य में निहित है। संस्कृत केवल एक भाषा नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान–परंपरा, दर्शन, धर्म, नीति, साहित्य, विज्ञान तथा सामाजिक मूल्यों की संवाहिका रही है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक संस्कृत साहित्य ने भारतीय समाज को नैतिकता, सदाचार, सहिष्णुता, समन्वय और मानव कल्याण की दिशा प्रदान की है। यद्यपि आधुनिक युग में सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण संस्कृत भाषा के उपयोग में कमी आई, तथापि अनेक विद्वानों ने अपने साहित्यिक, शैक्षिक एवं सामाजिक कार्यों के माध्यम से संस्कृत को पुनः जनमानस से जोड़ने का प्रयास किया। ऐसे विद्वानों में डॉ. मिथिलेश शर्मा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

डॉ. मिथिलेश शर्मा आधुनिक संस्कृत साहित्य के उन विद्वानों में गिने जाते हैं जिन्होंने संस्कृत भाषा एवं साहित्य को केवल परंपरागत अध्ययन तक सीमित न रखकर उसे समाजोपयोगी स्वरूप प्रदान किया। उनका साहित्यिक चिंतन भारतीय संस्कृति की मूल चेतना से अनुप्राणित है, जिसमें समाज सुधार, नैतिक जागरण, मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उन्होंने अपने लेखन, शिक्षण एवं सामाजिक गतिविधियों के माध्यम से संस्कृत साहित्य को लोकजीवन के निकट लाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है।

वर्तमान समय में जब समाज अनेक प्रकार की समस्याओं—जैसे नैतिक पतन, सांस्कृतिक विस्मृति, पारिवारिक विघटन, भौतिकवाद एवं मानवीय संवेदनाओं के ह्रास—से जूझ रहा है, तब संस्कृत साहित्य की प्रासंगिकता और अधिक बढ़ जाती है। संस्कृत साहित्य में निहित "वसुधैव कुटुम्बकम्", "सर्वे भवन्तु सुखिनः" तथा "लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु" जैसे आदर्श आज भी मानव समाज के लिए प्रेरणास्रोत हैं। डॉ. मिथिलेश शर्मा ने अपने साहित्यिक अवदान द्वारा इन आदर्शों को आधुनिक समाज से जोड़ने का प्रयास किया है। उनके साहित्य में सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय भावना, सांस्कृतिक संरक्षण तथा मानवीय संवेदनाओं का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है।

डॉ. मिथिलेश शर्मा का सामाजिक अवदान बहुआयामी है। एक ओर वे संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार के लिए निरंतर सक्रिय रहे, वहीं दूसरी ओर उन्होंने संस्कृत साहित्य को आधुनिक संदर्भों से जोड़ने का प्रयास किया। उनके द्वारा रचित साहित्य में समाज की समस्याओं, जनजीवन की परिस्थितियों तथा मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति अत्यंत प्रभावशाली ढंग से हुई है। उन्होंने संस्कृत को केवल धार्मिक या आध्यात्मिक

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

भाषा के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे सामाजिक परिवर्तन एवं जनजागरण का माध्यम माना। यही कारण है कि उनके साहित्य में लोकमंगल की भावना प्रमुख रूप से विद्यमान है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य के अध्ययन में यह तथ्य विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि अनेक विद्वानों ने संस्कृत को पुनर्जीवित करने के लिए विविध प्रयास किए, परंतु कुछ ही साहित्यकार ऐसे हुए जिन्होंने साहित्य और समाज के मध्य सशक्त संबंध स्थापित किया। डॉ. मिथिलेश शर्मा उन्हीं साहित्यकारों में से एक हैं। उनके साहित्य में सामाजिक समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता, शिक्षा के महत्व, नारी सम्मान, नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा तथा सांस्कृतिक चेतना का व्यापक स्वरूप दिखाई देता है। उनके विचारों में भारतीयता की गहरी जड़ें हैं, किंतु साथ ही आधुनिक सामाजिक आवश्यकताओं का भी समुचित समावेश है।

यह शोध-विषय "डॉ. मिथिलेश शर्मा का संस्कृत साहित्य में सामाजिक अवदान : एक विवेचन" इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इस विषय के माध्यम से आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक चेतना के स्वरूप का अध्ययन किया जा सकेगा। साथ ही यह भी स्पष्ट होगा कि डॉ. शर्मा ने किस प्रकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज को दिशा देने का कार्य किया। उनके साहित्यिक अवदान का विश्लेषण आधुनिक संस्कृत साहित्य की प्रवृत्तियों, उद्देश्यों एवं सामाजिक उपयोगिता को समझने में सहायक सिद्ध होगा।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य डॉ. मिथिलेश शर्मा के साहित्यिक एवं सामाजिक योगदान का सम्यक् अध्ययन करना है। इस अध्ययन के अंतर्गत उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय, उनकी प्रमुख रचनाओं का विश्लेषण, सामाजिक चेतना के विविध आयामों का विवेचन तथा संस्कृत साहित्य के विकास में उनके योगदान का मूल्यांकन किया जाएगा। साथ ही यह जानने का प्रयास किया जाएगा कि उनके साहित्य में कौन–कौन से सामाजिक तत्व विद्यमान हैं और वे वर्तमान समाज के लिए किस प्रकार प्रेरणादायक हैं।

अतः स्पष्ट है कि डॉ. मिथिलेश शर्मा का संस्कृत साहित्य में अवदान केवल साहित्यिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी अत्यंत मूल्यवान है। उनके साहित्य में निहित सामाजिक चेतना एवं लोकमंगल की भावना आधुनिक समाज के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकती है। इसी दृष्टि से प्रस्तुत शोध-विषय का अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक एवं उपयोगी है।

शोध के उद्देश्य -

1.डॉ. मिथिलेश शर्मा के विचारों और कार्यों का विश्लेषण करना - भारतीय सामाजिक संरचना के संदर्भ में उनके सामाजिक, शैक्षिक एवं वैचारिक योगदानों का समग्र अध्ययन करना।

2.सामाजिक सशक्तिकरण में उनकी भूमिका का मूल्यांकन करना - विशेष रूप से समानता, सामाजिक न्याय, समावेशन और जागरूकता के क्षेत्र में उनके योगदान का आंकलन करना।

शोध पद्धति -

किसी भी शोध कार्य में शोध पद्धति की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। यह शोध को एक वैज्ञानिक, व्यवस्थित और विश्वसनीय स्वरूप प्रदान करती है। शोध पद्धति के माध्यम से यह स्पष्ट

किया जाता है कि शोधकर्ता किस प्रकार समस्या का अध्ययन करेगा, तथ्य एकत्र करेगा और निष्कर्ष तक पहुँचेगा।

शोध अध्ययन की विधि अनेक प्रकार की होती है इस कार्य में ऐतिहासिक विधि ,वर्णनात्मक विधि ,विश्लेषणात्मक विधि के साथ –साथ प्राथमिक स्रोत एवं द्वितीयक स्रोत जैसे उनके द्वारा लिखित लेख, पुस्तकें, शोध पत्र द्वितीयक स्रोत ,जर्नल, शोध पत्र,पत्र-पत्रिकाएँ,इंटरनेट एवं ई-स्रोत आदि की सहायता से यह कार्य पूर्ण किया गया है |

जीवन परिचय -

जन्म - आचार्य पंडित मिथिलेश शर्मा जी का जन्म 01 मार्च, 1960 को गाँव पुर तहसील भवानी खेड़ा जिला भिवानी में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके दादा श्री हीरालाल जी प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं लोक कला, लोक व्यवहार, कुशल विचारशील स्वाभिमानी व्यक्तित्व के धनी थे। आचार्य जी के पिता श्री स्वर्गीय ब्रजलाल शास्त्री जी संस्कृत महाविद्यालय एवं राजकीय उच्च विद्यालय में संस्कृत अध्यापक थे, जबकि शास्त्री जी 1961 से 1965 तक राजकीय उच्च विद्यालय भिवानी में सरकारी सेवा करते हुए श्री हरियाणा शेखावाटी ब्रह्मचर्य आश्रम भिवानी में निवास करते हुए सायंकालीन शिक्षा प्रदान करते रहे। इससे भी बढ़कर, सनातन परम्परा का पालन करते हुए, वे पाँच वर्षों तक प्रतिदिन कपिला गाय के घी से पाच कुड़िया यज्ञ (अग्निहोत्र) करते रहे। आचार्य जी के पिता श्री ब्रजलाल शास्त्री जी जूते नहीं पहनते थे और सिले हुए वस्त्र पहनते थे। इस पर मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि वे एक गृहस्थ-योगी ऋषि थे। साहित्य और भारतीय संस्कृति इस परिवार में प्राण तत्त्वों की तरह रची-बसी रही है। इस प्रकार आचार्य जी ने सरकार में ही संस्कृत भाषा को खोज निकाला। इस पर मैं कह सकता हूँ कि 'जैसा बीज, वैसा फल' वाली कहावत उनके व्यक्तित्व पर सटीक बैठती है।

आचार्य जी की दादी श्रीमीरा लोक कला की सिद्धहस्त मानी जाती थीं। यदि किसी के घर पुत्र-जन्म, विवाह आदि का उत्सव होता तो उनकी उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती थी। कविवर आचार्य जी की पूज्य माता श्रीमती अणची देवी अत्यन्त धार्मिक, दयालु एवं परिश्रमी महिला थीं। माता के परिश्रम का प्रभाव बालक मिथिलेश शर्मा पर स्पष्ट दिखाई देता है। आचार्य जी अध्ययन-अध्यापन के साथ-साथ समस्त गृहस्थ कार्यों में भी कुशल हैं। उनके जीवन में माता का सान्निध्य प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुआ, क्योंकि लेखक के पिता का सरकारी नौकरी के कारण अनेक स्थानों पर स्थानांतरण होता रहता था, अतः उनका सान्निध्य अल्प मात्रा में ही प्राप्त हो सका। अनेक महापुरुषों की जीवनियों का प्रभाव उनके चरित्र पर दृष्टिगोचर होता है। आचार्य जी के जन्म के समय उनके पिता पेटवाड़ (हिसार) में संस्कृत अध्यापक के पद पर कार्यरत थे। यहाँ देखने में आता है कि उनका सम्पूर्ण परिवार अध्यापन कार्य से जुड़ा हुआ है, जिसके कारण वे समाज सेवा एवं मानव-शिक्षण के कार्य हेतु सदैव तत्पर रहते हैं। (1)

शिक्षा –

आचार्य मिथिलेश शर्मा ने बचपन में ही अपने पिता को खो दिया था। हालाँकि, उनके आशीर्वाद से, गाँव के स्कूल में चतुर्थ श्रेणी में उत्तीर्ण होने के बाद, उन्होंने श्री हरियाणा शेखावाटी ब्रह्मचर्य आश्रम

भिवानी से अपनी शिक्षा शुरू की। इस महाविद्यालय में अध्ययन करते हुए, उन्होंने अपने प्रारंभिक ज्ञान के आधार के लिए हिंदी और संस्कृत भाषाओं का बुनियादी ज्ञान प्राप्त करने के लिए लंबे समय तक अध्ययन किया और प्रवेश परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद उन्होंने श्री सनातन धर्म संस्कृत महाविद्यालय सराय चौपटा भिवानी, हरियाणा से संस्कृत भाषा में दक्षता हासिल की। आचार्य जी ने दयाकृष्ण पंतजी के चरणों में बैठकर जून 1972 में पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़ से प्राज्ञ और विशारद परीक्षाएँ तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण कीं। इसके बाद, उन्होंने अपनी परीक्षाओं के लिए संस्कृत को माध्यम चुना। 1973 में, उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से शास्त्री का प्रथम वर्ष उत्तीर्ण किया, लेकिन दुर्भाग्य से प्रतिकूल घरेलू परिस्थितियों के कारण, उन्हें अपना शिक्षण बीच में ही छोड़ना पड़ा और कुछ समय के लिए अवकाश लेना पड़ा। कुछ समय बाद, 1977 में उन्होंने शास्त्री की द्वितीय वर्ष की परीक्षा उत्तीर्ण की। मार्च 1979 में उन्होंने राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली से शिक्षा शास्त्री की उपाधि प्राप्त की। 19 अप्रैल, 1979 को आचार्य जी की नियुक्ति गैर-सरकारी अमृत मॉडल हाई स्कूल, अबोहर, पंजाब में संस्कृत अध्यापक के पद पर हुई।

आचार्य मिथिलेश शर्मा का कार्यक्षेत्र :-

उन्होंने 4 जुलाई 1998 से 20 अप्रैल 2002 तक राजकीय वरिष्ठ महाविद्यालय माध्यमिक विद्यालय बहबलपुर, हिसार में संस्कृत अध्यापक के रूप में कार्य किया। 20 अप्रैल 2002 को उन्हें संस्कृत प्राध्यापक के पद पर पदोन्नत किया गया और वे 9 अगस्त 2016 तक राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय चौधरीवास, हिसार में अपनी सेवाएं देते रहे। वे 9 अगस्त 2016 से 29 फरवरी 2020 तक संस्कृत प्राध्यापक के पद से सेवानिवृत्त हुए। वर्तमान में आचार्य जी अपनी पत्नी के साथ मकान नंबर 1419 यूई-2, हिसार में स्थायी रूप से निवास कर रहे हैं।

साहित्यिक योगदान : –

साहित्य किसी भी समाज की संस्कृति, संवेदना और चेतना का दर्पण होता है। यह न केवल भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम है, बल्कि सामाजिक, नैतिक और वैचारिक दिशा देने वाली शक्ति भी है। जब कोई लेखक अपनी रचनात्मक कृतियों के माध्यम से भाषा, विषयवस्तु, शैली और दृष्टिकोण में नवीनता लाता है, तो उसकी कृति केवल लेखन न रहकर एक साहित्यिक अवदान बन जाती है।

1.कुमार्यम्बा(एकादशैकांकिसंचयः)
2. पं० दीनदयाल उपाध्याय चरितम्
3. शौर्यगाथा (अमरहुतात्मन : ऊधमसिंहस्य)
4. स्वातन्त्र्यसेनानी गाथा
5. स्वामी धर्मदेव चरितम् (खण्डकाव्यम्)
6. सुवचांसि (भाग-1, भाग-2,भाग-3) (पद्य-विद्या)

डॉ. मिथिलेश शर्मा का सामाजिक योगदान -

डॉ. मिथिलेश शर्मा की समाज-दृष्टि उनके संस्कृत नाट्य साहित्य, शिक्षा एवं सामाजिक चेतना के माध्यम से विशेष रूप से उल्लेखनीय रही है। उन्होंने संस्कृत साहित्य को केवल शास्त्रीय परंपरा तक

सीमित न रखकर उसे समाजोपयोगी स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया। उनके साहित्य में समाज के नैतिक, सांस्कृतिक तथा मानवीय मूल्यों की सशक्त अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। वे मानते थे कि साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, बल्कि समाज को दिशा देने वाला माध्यम भी है। इसी भावना के कारण उनके नाट्य साहित्य में सामाजिक समस्याओं, मानवीय संवेदनाओं तथा लोकमंगल की चेतना का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

डॉ. मिथिलेश शर्मा ने अपने संस्कृत नाटकों के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों तथा नैतिक पतन की समस्याओं को उजागर किया। उनके साहित्य में भारतीय संस्कृति एवं परंपराओं के संरक्षण के साथ-साथ आधुनिक समाज की आवश्यकताओं का भी समन्वय मिलता है। उन्होंने नारी सम्मान, शिक्षा का महत्व, सामाजिक समरसता तथा राष्ट्रीय चेतना जैसे विषयों को प्रमुखता प्रदान की। उनके नाटकों में पात्र केवल मनोरंजन का साधन नहीं हैं, बल्कि वे समाज को नैतिक संदेश देने वाले माध्यम के रूप में प्रस्तुत होते हैं। इस प्रकार उनका साहित्य समाज सुधार की भावना से प्रेरित दिखाई देता है।शिक्षा के क्षेत्र में भी डॉ. मिथिलेश शर्मा का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। उन्होंने संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार तथा नई पीढ़ी को भारतीय संस्कृति से जोड़ने के लिए निरंतर प्रयास किए। उनका मानना था कि शिक्षा केवल ज्ञानार्जन का साधन नहीं, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण एवं संस्कार निर्माण का आधार है। इसी उद्देश्य से उन्होंने विद्यार्थियों में नैतिक मूल्यों, अनुशासन तथा सांस्कृतिक चेतना का विकास करने पर बल दिया। उनके शैक्षिक कार्यों ने संस्कृत के प्रति नई पीढ़ी में रुचि उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सामाजिक चेतना के क्षेत्र में डॉ. मिथिलेश शर्मा का दृष्टिकोण अत्यंत व्यापक एवं मानवीय था। उनके विचारों में "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उन्होंने समाज में समानता, सहयोग, सद्भावना तथा मानवीय मूल्यों की स्थापना का समर्थन किया। उनके साहित्य और विचारों में लोककल्याण की भावना प्रमुख रूप से विद्यमान है। वे संस्कृत साहित्य को समाज में नैतिक जागरण एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रभावी माध्यम मानते थे।

इस प्रकार डॉ. मिथिलेश शर्मा का सामाजिक योगदान बहुआयामी एवं प्रेरणादायक है। उन्होंने अपने साहित्य, शिक्षा एवं सामाजिक चिंतन के माध्यम से समाज को नई दिशा प्रदान करने का प्रयास किया। उनका योगदान आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक चेतना के सशक्त उदाहरण के रूप में सदैव स्मरणीय रहेगा।

1.स्त्रियों की दशा में सुधार –

भारतीय संस्कृति में नारी को जगत जननी, आदि शक्ति का स्वरूप, ज्ञान स्वरूपा और ब्रह्माण्ड की अधिष्ठात्री देवी बताया गया है। संहिताओं, ब्राह्मण, आरण्यकों, उपनिषदों, स्मृतियों और पुराणों में नारी को इसी रूप में चित्रित किया गया है। विश्व की समस्त सभ्यताओं और संस्कृतियों में शायद हमारी सभ्यता ही एकमात्र ऐसी सभ्यता है जिसमें नारी को देवी, शक्ति या पुरुष से भी सौ गुना अधिक पूजनीय और पूजनीय बताया गया है। भारतीय जीवन मूल्यों की अवधारणा और प्रकृति की अवधारणा के केंद्र में नारी ही है। हमने पृथ्वी को माता कहा है, गाय को ममतामयी कहा है, गंगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों को

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

इन्हीं शब्दों से संबोधित किया है। गायत्री मंत्र, जिसे हम पवित्र प्रार्थना मानते हैं, उसमें भी माता गायत्री की वंदना की गई है। अन्नपूर्णा स्थूल शरीर की संचालिका या अन्न की देवी हैं। मनुस्मृति में भी कहा गया है-

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता ।
यत्रास्तु ना पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।। " (2)

भाव यह है कि जिस स्थल पर नारी की उपेक्षा हो वहाँ कोई मंगल कार्य संपन्न नहीं होता; परन्तु जहाँ नारी की दैवीय रूप में स्तुति की जाएगी , देवता भी प्रसन्नपूर्वक उसी स्थल पर सुशोभित होंगे। इसी कथ्य को पल्लवित करते हुए 'महर्षि गर्ग' कहते हैं-

'यद् गृहे रमते नारी लक्ष्मीस्तद् गृहवासिनी।
देवता कोटिशो वत्सः न त्यजन्ति गृहं ही तत्।।

अर्थात् जिस घर में सद्गुण भूषित नारी आनन्दपूर्वक निवास करती है, उस घर में निरंतर लक्ष्मी का वास होता है। हे वत्स ! कोटि देवता भी ऐसे घर का त्याग नहीं करते हैं।

यह भारतीय संस्कृति का महत्त्व ही है कि इस तथ्य को समझते हुए, कुछ स्थानों को छोड़कर, स्त्रियों को सदैव पूजनीय माना गया है। स्त्री रूप में अवतरित देवियों को मानव जीवन के सर्वांगीण विकास एवं कल्याण का आधार, धन, ज्ञान, समृद्धि एवं पराक्रम की अधिष्ठात्री देवी माना गया है। वैदिक काल से ही हमारे देश में स्त्रियों को पूजनीय माना गया है और उनकी अनेक प्रकार से स्तुति की गई है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में 'अर्धनारीश्वर' का आदर्श स्पंदित होता रहा है। अर्धनारीश्वर की कल्पना से अधिक भयावह कुछ भी नहीं हो सकता। यदि प्रत्येक काल अपने भीतर सौन्दर्य एवं भावना के इस सागर को समाहित कर ले, तो वर्ग-भेद के विरुद्ध हिंसा का शमन हो जाएगा। आधुनिक काल में भी इस आदर्श की परिणति त्रिदेवियों में विद्यमान है। बालकों को शिक्षा प्रदान करते समय उनका सरस्वती रूप प्रकट होता है, गृहस्थी का संचालन एवं कुशल गृहिणी के रूप में उनका लक्ष्मी रूप प्रकट होता है और पापियों एवं दुष्टों का संहार करते समय उनका दुर्गा रूप प्रकट होता है। यहाँ तक कि स्त्री के अभाव में कोई भी शुभ और अच्छा कार्य निष्फल माना जाता है।

तीनों लोकों में नारी के इन सभी रूपों में मातृत्व को विशेष माना गया है। उसके चरणों में स्वर्ग और मोक्ष की कल्पना की जाती है। जिसके हृदय में कोमलता, पवित्रता, शीतलता, स्नेह जैसे अनेक उत्तम गुण समाहित हैं। जिसकी निश्छल मुस्कान में सृजन की अद्वितीय शक्ति है; जो सभी मनुष्यों को सही मार्ग दिखाती है; इसीलिए कहा गया है- "मातृदेवो भव।" (3) हमने नारी के इस रूप और चरित्र का सम्मान किया। पुरुषों का कर्तव्य है कि वे नारी चेतना को सर्वोच्च मानें और उसके सम्मान की रक्षा करें, उसके नारीत्व के पात्र बनें।

2. शिक्षा एवं नैतिकता –

हमें समाज के हर वर्ग को साथ लेकर आगे बढ़ना चाहिए, चाहे वह गरीब हो या अमीर, शिक्षित हो या अशिक्षित, ग्रामीण हो या शहरी। इसी में हम सबकी और सम्पूर्ण विश्व की प्रगति संभव है। यही

हमारी शिक्षा और नैतिकता को दर्शाता है। इसी भावना को प्रतिबिम्बित करती डॉ. मिथिलेश आचार्य की ये पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत करने योग्य हैं-

परितोऽपि पामराणां तृणशालिका इमाः।
होलानलं समिन्धय बन्धो ! शनैः शनैः ।। (4)

अर्थात् हे बन्धु । आप अपने होली का त्योहार इस प्रकार मनाना जिससे कि होली दहन के साथ पास में स्थित गरीबों की बस्ती झुग्गी-झोंपडियाँ अथवा कच्ची बस्ती आग की भेंट न चढ जाए। उद्यमशील बनने के लिए मनुष्य मात्र को संदेश देते हुए कविवर कहते हैं कि हमें विघ्न बाधाओं से डरकर बैठने की बजाय उनका धैर्यपूर्वक सामना करते हुए सिद्धिमार्ग पर आगे बढ़ते रहना चाहिए, यथोक्त-

गुणा गुणिषु पूज्यन्ते, न च लिंग वयस्तथा ।
निश्चयेन तु पूजार्थमर्जनीया गुणा सदा।। (5)

समाज में प्रत्येक प्राणी को सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अधिकार है। अतः अमर्यादित आचरण से दूसरे की जिंदगी में कोई खलल उत्पन्न नहीं हो इस बात का हमें ध्यान रचना चाहिए। इसी बात को मिथिलेश जी हमें कुमार्यम्बा रचना के माध्यम से दृष्टान्त से समझा रहे हैं- जनता जागरित्वा किं करिष्यति? नेतारः आदिनं किंचित् च किचित सम विषमं कुर्वन्तः सन्ति । (6) अर्थात् जो नेता जनता को भ्रमित करके अच्छे बुरे कार्य करके दण्ड से बच जाते थे। अब जनमानस जागृत हो चुका है। इस संसार में सबसे योग्य प्रथम व्यक्ति ही है। अतः आपके रहते हुए कोई भी अमर्यादित आचरण नहीं करे यह आपका दायित्व हो जाता है। और इसी दायित्व को हमे समाज के प्रति पूरा करने का संकल्प करना चाहिए |

3.धार्मिक आस्था –

भारतीय संस्कृत जगत में धर्म के विशिष्ट प्रकारों का वर्णन किया गया है। धर्म की विभिन्न व्युत्पत्तियों के अनुसार धर्म का स्वरूप भी विविध बताया गया है, किन्तु समय के साथ धर्म का स्वरूप बदलता प्रतीत होता है। आचार्य महावीर प्रसाद शास्त्री ने 'वैराग्यवीरचरितम्' (7) में धर्म के बदलते स्वरूप को दर्शाया है। काले कालेथ धर्मस्य पन्था: विजैर्महात्मभिः। नवीन एवं नवीनतम: परिचय। धारायां शावस्थावो धर्मो यद्यप्येकः संस्भुतः। परम कालगतिश्चित्र वैचिर्येनानुभूयते। 'कृष्णद्वैपायनो व्यासो भारते सर्वमुक्तवान्। गुहाओं में निहित तत्त्वं धर्मस्येति वदं मुहुः। आचार्य के अनुसार महात्माओं ने समय-समय पर धर्म का नया मार्ग दिखाया है। जिसे केवल काल धर्म को जानने वाले ही पहचान सकते हैं। पृथ्वी पर एक ही धर्म है और वह सनातन है, किन्तु काल की अद्भुत गति के कारण उसमें एक विचित्र अनुभूति होती है। महाभारत में कृष्ण द्वैपायन व्यास ने यह कहकर सब प्रकट कर दिया है कि धर्म का सार गुफा में निहित है। डॉ. मिथिलेश शर्मा ने धर्म को अत्यंत रहस्यमय माना है। युगों-युगों तक अपनी महिमा बनाए रखता है। (8) वैराग्यचरितम् के अनुसार यद्यपि धर्म का स्वरूप बदलता रहता है, जैसे - 'कृतयुगे तपो धर्मो ज्ञान त्रेतायुगे तथा। द्वापर विहितो यज्ञो दानं कलियुगे बुद्ध:। (9) सत्ययुग में तप करना धर्म है, त्रेतायुग में ज्ञान को धर्म माना गया है। द्वापरयुग में यज्ञ का अनुष्ठान धर्म है और कलियुग में दान का अत्यधिक महत्व होने के कारण दान को धर्म माना गया है। वेदों में ज्ञान, यज्ञ, दान आदि का वर्णन और महत्व व्यक्त किया

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

गया है, किन्तु समयानुसार कुछ नियमों का अत्यधिक पालन होने के कारण वह उस समय का धर्म बन जाता है, इस प्रकार धर्म बदलता रहता है। यह धर्म परिवर्तित होने पर भी स्थिर और शाश्वत रहता है जैसा कि कहा गया है – धर्मो सनातनों नित्य जनै: समयगणुष्ठित: | (10) इस प्रकार सभी धर्म एक हैं, यह शाश्वत और सनातन है। सबसे बड़ा धर्म मानव धर्म है। एक ही मानव धर्म है, एक ही मानव जाति है। एकता का यही सिद्धांत गुरुओं ने कहा है। मानव मात्र के कल्याण को मानव धर्म मानकर लेखक देश की उन्नति की कामना करते हैं। देश के कल्याण के लिए कार्य करना चाहिए, इस भावना को लेखक "देशधर्म" मानते हैं। यह फसलों वाली भूमि, निर्जन क्रीड़ास्थली, गुरु की पावन भूमि, जहाँ हम निवास करते हैं, वह हमारी मातृभूमि कहलाती है। (11) मातृभूमि की सेवा और मातृभूमि की रक्षा ही मनुष्य का परम धर्म है। इस मातृभूमि की महिमा स्वर्ग से भी अधिक है। स्वयं भगवान श्री राम लक्ष्मण से कहते हैं कि माँ और मातृभूमि का महत्व स्वर्ग से भी अधिक महिमामय है ऐसी परंपरा में मातृभूमि को देवभूमि से भी बढ़कर क्यों न माना जाए ? अतः इस मातृभूमि की सेवा भी धर्म है। (12)

4. संस्कृत साहित्य की पहचान :-

डॉ. मिथिलेश शर्मा ने संस्कृत साहित्य, विशेषतः संस्कृत नाट्य साहित्य, को जनसामान्य से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनका मानना था कि संस्कृत केवल पंडितों, विद्वानों अथवा धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित भाषा नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति, ज्ञान और मानवीय मूल्यों की ऐसी धरोहर है जिस पर समाज के प्रत्येक वर्ग का समान अधिकार है। उन्होंने अपने साहित्यिक कार्यों के माध्यम से संस्कृत भाषा को सरल, सुबोध एवं व्यवहारिक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया, ताकि सामान्य व्यक्ति भी संस्कृत साहित्य के सौंदर्य और उसके सामाजिक संदेश को सहज रूप से समझ सके।

प्राचीन काल में संस्कृत भाषा ज्ञान-विज्ञान, दर्शन, साहित्य, धर्म और संस्कृति की प्रमुख भाषा रही है। वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत तथा कालिदास, भास और भवभूति जैसे महाकवियों की रचनाओं ने संस्कृत साहित्य को विश्व में विशेष प्रतिष्ठा प्रदान की। किन्तु समय के परिवर्तन के साथ संस्कृत भाषा धीरे-धीरे सीमित होती चली गई और यही धारणा भादू जी की भी बन गई कि संस्कृत केवल विद्वानों एवं पंडितों की भाषा है। परिणामस्वरूप सामान्य जनमानस संस्कृत साहित्य से दूर होता गया। संस्कृत की यह दूरी केवल भाषा की नहीं थी, बल्कि भारतीय संस्कृति और नैतिक मूल्यों से भी दूरी का कारण बनने लगी।(13) ऐसी परिस्थिति में डॉ. मिथिलेश शर्मा ने संस्कृत साहित्य को पुनः समाज के निकट लाने का सार्थक प्रयास किया। उन्होंने अपने संस्कृत नाटकों और साहित्यिक रचनाओं में ऐसी भाषा एवं शैली का प्रयोग किया जो सरल, सहज तथा जनसामान्य के लिए ग्राह्य हो। उनका उद्देश्य केवल साहित्य सृजन करना नहीं था, बल्कि संस्कृत को जीवंत एवं लोकाभिमुख बनाना था। उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि संस्कृत साहित्य केवल शास्त्रार्थ और विद्वत्ता का विषय नहीं, बल्कि समाज की समस्याओं, मानवीय संवेदनाओं और लोकजीवन की अभिव्यक्ति का भी प्रभावी माध्यम है।

डॉ. मिथिलेश शर्मा के नाटकों में सामाजिक चेतना, नैतिक शिक्षा, सांस्कृतिक मूल्यों तथा मानवीय संबंधों का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। उन्होंने संस्कृत नाटकों को केवल मंचीय कला तक सीमित न

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

रखकर उसे समाज जागरण का माध्यम बनाया। उनके साहित्य में ऐसे विषयों को स्थान मिला जो सामान्य व्यक्ति के जीवन से जुड़े हुए हैं। इस कारण उनके नाटक केवल विद्वानों द्वारा ही नहीं, बल्कि विद्यार्थियों, युवाओं और सामान्य पाठकों द्वारा भी रुचिपूर्वक पढ़े और समझे जा सकते हैं।

संस्कृत भाषा को लोकप्रिय बनाने के लिए डॉ. मिथिलेश शर्मा ने शिक्षण एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने विद्यार्थियों और युवा पीढ़ी में संस्कृत के प्रति रुचि उत्पन्न करने का प्रयास किया। उनके विचार में यदि संस्कृत को सरल रूप में प्रस्तुत किया जाए और उसे आधुनिक सामाजिक संदर्भों से जोड़ा जाए, तो यह भाषा पुनः जनभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो सकती है। इसी दृष्टि से उन्होंने संस्कृत साहित्य में आधुनिकता और परंपरा का समन्वय स्थापित किया।

डॉ. मिथिलेश शर्मा का यह प्रयास केवल साहित्यिक नहीं, बल्कि सामाजिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण था। उन्होंने संस्कृत साहित्य को जनसामान्य तक पहुँचाकर भारतीय संस्कृति और सांस्कृतिक चेतना को सुदृढ़ करने का कार्य किया। उनके साहित्य में "लोकमंगल" की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वे मानते थे कि साहित्य तभी सार्थक है जब वह समाज को दिशा दे और सामान्य व्यक्ति के जीवन से जुड़ सके।

इस प्रकार डॉ. मिथिलेश शर्मा ने संस्कृत साहित्य को जनमानस के निकट लाकर उसकी नई पहचान स्थापित की। उन्होंने संस्कृत को केवल परंपरा की भाषा न मानकर आधुनिक समाज की आवश्यकता और सांस्कृतिक चेतना का माध्यम बनाया। संस्कृत साहित्य के प्रचार-प्रसार तथा उसे जनसुलभ बनाने में उनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण एवं प्रेरणादायक है। यही कारण है कि वे आधुनिक संस्कृत साहित्य के ऐसे साहित्यकार के रूप में स्मरण किए जाते हैं जिन्होंने संस्कृत भाषा और नाट्य साहित्य को समाज के व्यापक वर्ग तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया।

5. सामाजिक बुराइयों पर लेखन : -

डॉ. मिथिलेश शर्मा का साहित्य केवल मनोरंजन अथवा शास्त्रीय परंपरा का निर्वाह करने तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसमें समाज की वास्तविक समस्याओं और मानवीय पीड़ाओं का सशक्त चित्रण देखने को मिलता है। वे एक ऐसे साहित्यकार थे जिन्होंने संस्कृत साहित्य को सामाजिक चेतना और जनजागरण का माध्यम बनाया। उनके नाटकों और साहित्यिक रचनाओं में दहेज प्रथा, जातिगत भेदभाव, महिलाओं का शोषण, गरीबी, सामाजिक असमानता तथा शोषण जैसी गंभीर समस्याओं को प्रमुखता से उठाया गया है। उन्होंने इन सामाजिक बुराइयों को केवल वर्णित ही नहीं किया, बल्कि उनके प्रति समाज को जागरूक करने और परिवर्तन की प्रेरणा देने का भी प्रयास किया।

डॉ. मिथिलेश शर्मा का मानना था कि साहित्य समाज का दर्पण होता है और एक सच्चे साहित्यकार का कर्तव्य केवल कल्पनाओं की दुनिया रचना नहीं, बल्कि समाज की वास्तविक परिस्थितियों को सामने लाना भी है। इसी दृष्टि से उनके नाटकों में सामाजिक जीवन की विसंगतियाँ अत्यंत प्रभावशाली रूप में चित्रित हुई हैं। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से यह स्पष्ट किया कि सामाजिक कुरीतियाँ मानव जीवन

को किस प्रकार प्रभावित करती हैं और किस प्रकार वे समाज के नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को कमजोर बनाती हैं।

दहेज प्रथा के विषय में भीमराव अम्बेडकर जी के विचार अत्यंत प्रखर थे। उन्होंने इस कुरीति को समाज के लिए अभिशाप माना। उनके नाटकों में दहेज के कारण उत्पन्न पारिवारिक तनाव, आर्थिक बोझ तथा महिलाओं के अपमानजनक जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है। वे यह संदेश देते हैं कि विवाह एक पवित्र सामाजिक संबंध है, न कि धन और लेन-देन का माध्यम। उनके साहित्य में दहेज प्रथा के विरुद्ध स्पष्ट सामाजिक चेतना दिखाई देती है, जो पाठकों और दर्शकों को इस समस्या पर गंभीरता से विचार करने के लिए प्रेरित करती है।[14]

जातिगत भेदभाव और सामाजिक ऊँच-नीच के विरुद्ध भी डॉ. मिथिलेश शर्मा ने अपने साहित्य में सशक्त स्वर उठाया। वे मानव समानता और सामाजिक समरसता के समर्थक थे। उनके विचार में समाज का वास्तविक विकास तभी संभव है जब सभी व्यक्तियों को समान सम्मान और अवसर प्राप्त हों। उनके नाटकों में जाति-आधारित भेदभाव के कारण उत्पन्न सामाजिक तनाव और मानवीय पीड़ा का मार्मिक चित्रण मिलता है। उन्होंने भारतीय संस्कृति के मूल सिद्धांत "वसुधैव कुटुम्बकम्" को आधार बनाकर सामाजिक एकता और भाईचारे का संदेश दिया।

महिलाओं की स्थिति और उनके शोषण का प्रश्न भी उनके साहित्य का महत्वपूर्ण विषय रहा है। उन्होंने नारी को केवल करुणा की पात्र के रूप में नहीं, बल्कि समाज की शक्ति और संस्कृति की वाहक के रूप में प्रस्तुत किया। उनके नाटकों में महिलाओं के संघर्ष, आत्मसम्मान तथा अधिकारों की चेतना का सशक्त चित्रण मिलता है। वे नारी शिक्षा, सम्मान और समान अधिकारों के समर्थक थे। उनके साहित्य में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि किसी भी समाज की प्रगति महिलाओं की स्थिति पर निर्भर करती है।

गरीबी और शोषण जैसी समस्याओं को भी मीना वर्मा जी एवं अन्य लेखकों ने भी गंभीरता से प्रस्तुत किया। उन्होंने समाज के कमजोर और वंचित वर्गों की पीड़ा को अपनी रचनाओं में स्थान देकर सामाजिक संवेदनशीलता का परिचय दिया। उनके साहित्य में श्रमिकों, गरीबों और शोषित वर्गों के जीवन-संघर्ष का यथार्थ चित्रण मिलता है, जो पाठकों के मन में सहानुभूति और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करता है। [15]

डॉ. मिथिलेश शर्मा की विशेषता यह थी कि उन्होंने संस्कृत भाषा को केवल धार्मिक या पौराणिक विषयों तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे आधुनिक सामाजिक परिवर्तन का प्रभावी माध्यम बनाया। उन्होंने सिद्ध किया कि संस्कृत भाषा में आज भी इतनी शक्ति है कि वह समाज की ज्वलंत समस्याओं को अभिव्यक्त कर सकती है और सामाजिक सुधार का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। उनका साहित्य यह प्रमाणित करता है कि संस्कृत केवल अतीत की भाषा नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के समाज को दिशा देने वाली सशक्त भाषा भी है।

इस प्रकार डॉ. मिथिलेश शर्मा का सामाजिक बुराइयों पर आधारित लेखन अत्यंत प्रभावशाली एवं प्रेरणादायक है। उनके साहित्य में सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना और सुधारवादी दृष्टिकोण का सुंदर

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

समन्वय देखने को मिलता है। उन्होंने अपने नाटकों और साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से समाज में जागरूकता उत्पन्न करने तथा लोगों को सकारात्मक परिवर्तन के लिए प्रेरित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। यही कारण है कि उनका साहित्य आधुनिक संस्कृत साहित्य में सामाजिक चेतना का सशक्त उदाहरण माना जाता है।

6. सामाजिक एकता का संदेश : -

डॉ. मिथिलेश शर्मा का साहित्य सामाजिक समरसता, धार्मिक सहिष्णुता और मानवीय एकता का सशक्त प्रतीक है। उन्होंने अपने नाटकों, भाषणों तथा साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से समाज में भाईचारे, सहयोग और पारस्परिक सम्मान की भावना को विकसित करने का प्रयास किया। उनका स्पष्ट मत था कि किसी भी समाज अथवा राष्ट्र की वास्तविक उन्नति तभी संभव है जब उसके नागरिकों के बीच समानता, सद्भाव और एकता का वातावरण हो। इसी कारण उनके साहित्य में सामाजिक एकता का स्वर अत्यंत प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्त हुआ है।

डॉ. मिथिलेश शर्मा ने संस्कृत साहित्य को केवल शास्त्रीय सौंदर्य की अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे समाज को जोड़ने और जागरूक करने का माध्यम बनाया। उनके नाटकों में धार्मिक, सांस्कृतिक और जातीय भेदभाव के विरुद्ध स्पष्ट चेतना दिखाई देती है। वे मानते थे कि भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता उसकी विविधता में निहित एकता है। भारत में विभिन्न धर्म, भाषाएँ, जातियाँ और संस्कृतियाँ होने के बावजूद एक गहरी सांस्कृतिक एकता विद्यमान है, जिसे बनाए रखना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है।

उनके साहित्य में यह विचार प्रमुख रूप से व्यक्त हुआ है कि धर्म का वास्तविक उद्देश्य मनुष्यता की रक्षा करना और समाज में प्रेम एवं सद्भाव स्थापित करना है। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से यह संदेश दिया कि "धर्म मनुष्यता को जोड़ता है, तोड़ता नहीं।" यह विचार उनकी उदार एवं मानवीय दृष्टि को स्पष्ट करता है। वे धार्मिक कट्टरता और संकीर्ण मानसिकता के विरोधी थे। उनके अनुसार यदि धर्म के नाम पर समाज में विभाजन और वैमनस्य फैलता है, तो वह धर्म के वास्तविक स्वरूप के विपरीत है। इसलिए उन्होंने धार्मिक सहिष्णुता और आपसी सम्मान को समाज की स्थिरता और प्रगति के लिए आवश्यक माना।

जातिगत भेदभाव के विरुद्ध भी डॉ. मिथिलेश शर्मा का दृष्टिकोण अत्यंत प्रगतिशील था। उन्होंने अपने नाटकों में यह दिखाया कि मनुष्य की श्रेष्ठता उसके जन्म, जाति या कुल से नहीं, बल्कि उसके कर्म, ज्ञान और सदाचार से निर्धारित होती है। उनके पात्र समाज में व्याप्त ऊँच-नीच और भेदभाव का विरोध करते हुए दिखाई देते हैं। वे भारतीय संस्कृति के उस मूल सिद्धांत को स्वीकार करते थे जिसमें समस्त मानव जाति को एक समान माना गया है। उनके साहित्य में "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना स्पष्ट रूप से विद्यमान है, जो संपूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की प्रेरणा देती है।

डॉ. मिथिलेश शर्मा ने सामाजिक समरसता को राष्ट्र निर्माण का आधार माना। उनका विश्वास था कि यदि समाज में पारस्परिक द्वेष, भेदभाव और असमानता बनी रहेगी, तो राष्ट्रीय प्रगति संभव नहीं हो सकेगी।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

इसलिए उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों को एक सूत्र में बाँधने का प्रयास किया। उनके नाटकों में प्रेम, सहयोग, सहानुभूति और मानवीय मूल्यों की स्थापना पर विशेष बल दिया गया है। वे चाहते थे कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति को समान सम्मान और अवसर प्राप्त हो।

उनकी साहित्यिक दृष्टि केवल आदर्शवाद तक सीमित नहीं थी, बल्कि उसमें व्यावहारिक सामाजिक चेतना भी निहित थी। सुमित जी ने भी मिथिलेश जी की बात से सहमत होते हुए यह समझाने का प्रयास किया कि सामाजिक एकता केवल भाषणों या नारों से स्थापित नहीं हो सकती, बल्कि इसके लिए व्यवहार में समानता, सहिष्णुता और भाईचारे की भावना आवश्यक है। यही कारण है कि उनके साहित्य का प्रभाव केवल बौद्धिक स्तर तक सीमित न रहकर सामाजिक जीवन पर भी पड़ता है। [16]

इस प्रकार डॉ. मिथिलेश शर्मा का सामाजिक एकता संबंधी संदेश अत्यंत व्यापक और प्रेरणादायक है। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से समाज को यह शिक्षा दी कि मानवता, समानता और भाईचारा ही किसी भी सभ्य समाज की वास्तविक पहचान है। उनका साहित्य आज भी सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता की भावना को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यही कारण है कि वे आधुनिक संस्कृत साहित्य के ऐसे साहित्यकार माने जाते हैं जिन्होंने साहित्य को सामाजिक एकता और मानवीय चेतना का प्रभावी माध्यम बनाया।

7. संस्कृत नाट्य धरोहर को पुनर्जीवित करना :- उन्होंने संस्कृत नाटकों के मंचन को बढ़ावा दिया, जिससे न केवल यह परंपरा संरक्षित रही, बल्कि यह सामाजिक संदेश देने का एक सशक्त माध्यम भी बनी। संस्कृत नाट्य परंपरा भारत की अत्यंत समृद्ध एवं गौरवशाली सांस्कृतिक विरासत रही है। कालिदास, भास, भवभूति जैसे नाटककारों की रचनाएँ नाट्यशास्त्र पर आधारित थीं और शास्त्रीय रंगमंच का सर्वोच्च रूप प्रस्तुत करती थीं। लेकिन समय के साथ संस्कृत नाटक धीरे-धीरे लुप्तप्राय होता गया और यह केवल पुस्तकों तक ही सीमित रह गया। ऐसे समय में डॉ. मिथिलेश शर्मा जैसे विद्वानों ने इस कला को पुनर्जीवित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। [17]

डॉ. मिथिलेश शर्मा के मंचन में शास्त्रीय नाट्य तकनीक और आधुनिक नाट्य तत्वों का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। संस्कृत अलंकारों और छंदों का प्रयोग करके भी वे प्रस्तुति को रोचक और दर्शकोन्मुख बनाते हैं। उनके द्वारा लिखे और मंचित नाटकों में सामाजिक सरोकारों, जैसे-स्त्री अधिकार, शिक्षा, जाति-भेद, पर्यावरण आदि को विषय बनाया गया। इससे यह धारणा टूटी कि संस्कृत नाटक केवल धार्मिक या पौराणिक विषयों तक ही सीमित है। उन्होंने संस्कृत मंचन में प्रायः लोक नाट्य शैलियों (जैसे भावात्मक नाटक, संवाद-प्रधान शैली) और शारीरिक अभिनय का समावेश किया, जिससे प्रस्तुति अधिक आकर्षक बनी और दर्शकों के साथ उनका सहज जुड़ाव स्थापित हुआ। डॉ. मिथिलेश शर्मा ने अपने नाटकों का मंचन न केवल स्थानीय स्तर पर, बल्कि राष्ट्रीय संगोष्ठियों, संस्कृत सम्मेलनों और नाट्य समारोहों में भी करवाया। इससे संस्कृत नाटक को एक बार फिर जीवंत मंचीय कला के रूप में मान्यता मिलने लगी।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 7.2 ISSN No: 3049-4176

निष्कर्ष - भारतीय सामाजिक संरचना के सशक्तिकरण में डॉ. मिथिलेश शर्मा का योगदान बहुआयामी, दूरदर्शी और व्यापक प्रभाव वाला रहा है। उन्होंने शिक्षा, सामाजिक न्याय, ग्रामीण विकास, महिला सशक्तिकरण और दलित-वंचित समुदायों के उत्थान जैसे प्रमुख क्षेत्रों में सतत कार्य किया। उनके प्रयासों ने न केवल सामाजिक असमानताओं को कम करने की दिशा में ठोस आधार तैयार किया, बल्कि समाज में जागरूकता, संवेदनशीलता और समान अवसरों की भावना को भी प्रबल किया।

डॉ. मिथिलेश शर्मा ने सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देकर जमीनी स्तर पर लोगों की आवाज़ को मजबूत किया, जिससे निर्णय-प्रक्रिया अधिक सहभागी और समावेशी बन पाई। उनकी पहलों के परिणामस्वरूप शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में नए अवसर खुले, और सामाजिक कुरीतियों तथा भेदभाव के विरुद्ध एक सशक्त जनचेतना विकसित हुई। नीति-निर्माण और संस्थागत सुधारों में भी उनके सुझावों और कार्यों ने सकारात्मक परिवर्तन की दिशा प्रदान की।

अतः यह कहा जा सकता है कि डॉ. मिथिलेश शर्मा ने भारतीय सामाजिक संरचना को अधिक न्यायपूर्ण, संतुलित और सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनका योगदान आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत है और सामाजिक विकास के लिए एक प्रभावी मार्गदर्शक भी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. डॉ.मिथिलेश शर्मा, पं० दीनदयाल उपाध्याय चरितम्, परिचय भाग
2. Dwivedi, B. (2005). Religious basis of Hindu beliefs. Diamond Pocket Books (P) Ltd.
3. Sriramesh, K., & Yeo, S. L. (Eds.). (2024). Crisis Communication Cases from Asia: A Cultural Approach. Taylor & Francis.
4. डॉ० मिथिलेशाचार्य, स्वामिधर्मदेवचरितम् 3/13
5. डॉ० मिथिलेशाचार्य, स्वामिधर्मदेवचरितम् 3/22. पृ.-34
6. डॉ० मिथिलेश शर्मा, कुमार्यम्बा पृ -137
7. वैराग्यवीर चरितम्" सर्ग – 4, श्लोक 90 -95
8. श्रविं बिना कुतः प्रातः, चन्द्रं बिना कुतो निशा।
मेघं बिना कुतो वर्षा धर्म बिना कुतः शुभम् ।। सुवचांसि, श्लो. -17
9. वैराग्यवीर चरितम्" सर्ग,98
10. 'वैराग्यवीर चरितम् सर्ग, पृ.-105
11..डॉ.मिथिलेश शर्मा, शौर्यगाथा, पृ.-53
12. वाल्मीकि रामायण,अयोध्याकाण्ड,24/9
13. Bhadu, R. (2003). Dharamsatta Aur Pratirodh Ki Sanskriti. Rajkamal Prakashan.
14. Ambedkar, B. R., & Code, U. C. (2022). डॉ० बी. आर. अम्बेडकरः जीवन वृत्ति एवं संघर्ष. डॉ० भीमराव रामजी अम्बेडकर और समान नागरिक संहिता: Dr Bhimrao Ramji Ambedkar and Uniform Civil Code, 65.

15. Verma, M., & Jorasiya, P. दलित विमर्श की अवधारणा और अभिव्यक्ति: प्रमुख साहित्यकारों के दृष्टिकोण से. IJAIDR-Journal of Advances in Developmental Research, 16(1).
16. Sarkar, S. (2009). Aadhunik Bharat. Rajkamal Prakashan.
17. डॉ० मिथिलेश शर्मा, कुमार्यम्बा,भूमिका भाग